Purva Mimaansa | Refereed | Peer Reviewed
ISSN: 0976-0237 | Volume 17, Issue: March 2026 | Impact Factor 5.275

हठयोग में ग्रन्थि भेदन: एक दार्शनिक विश्लेषण

मोहित वासदेव

सहायक प्रोफेसर, योग विभाग, सरकारी योग शिक्षा और स्वास्थ्य महाविद्यालय, चंडीगढ़

व्यक्तितत्त्व के विकास में प्रमुख कारण बुद्धि कि स्थिरता या उसका विकास महत्वपूर्ण है। बुद्धि के विकास में कई बाधाएं आती है। इनमे प्रमुख बाधा भावना-ग्रंथियाँ (mental complexes)है। हठ योग के अनुसार मलशुद्धि जब तक नहीं हो जाती, तब तक शक्ति का संचार असंभव है, शक्ति संचार के अभाव में बुद्धि (तेज) का विकास असम्भव है, बुद्धि विकास के अभाव में शान्ति लक्षणा स्थिर प्रतिष्ठा असम्भव है।

मलाकुलासु नाडीषु मारुतो नैव मध्यगः ।
कथं स्यादुन्मनीभावः कार्यसिद्धिः कथं भवेत्॥(ह.यो.प्र. 2:4)

युंग के मतानुसार जब हमारी प्रकृत इच्छाओं और वातावरण में सामंजस्य नहीं होता, अथवा प्रकृत इच्छाओं की पूर्ति असम्भव होती है तब मानसिक रोग उत्पन्न होता है।इसी असामंजस्य के कारण मनुष्य का व्यक्तित्व- संतुलन जाता रहता है। अज्ञात मन में पड़ी सब भावना-ग्रंथियाँ प्रायः निम्न प्रकार की होती है

हीनत्व-ग्रंथि(Inferiority complex)

काम -ग्रंथि (Sex-complex)

समाज- ग्रंथि (Social-complex)

भावना- ग्रंथियों के स्वरूप और लक्षणकी ओर दृष्टिपात करने से यह पता लगता है कि ये केवल मन के विकार हैं और इनके अधिक जटिल और गूढ़ होने पर मनुष्य अस्वस्थ हो जाता है।जिस प्रकार रोग के कीटाणुओं से शरीर जर्जर हो जाता है उसी प्रकार भावना-ग्रंथियों से मन दुर्बल होता है।मानव का विचार-भाव-व्यवहार असंबद्ध हो जाता है। कभी तो रोगी अकारण निराशा के सागर में गोते मारता है, और कभी प्रबल हो उठता है। दूसरो पर आक्रमण करता है। वास्तव में भावना-ग्रंथियाँ ही रोग के बीज है। इन ग्रंथियों का प्रमुख आदि कारण मनःशक्ति का किसी एक दिशा में अत्यधिक प्रवाह है। किसी भी एक विशेष दिशा में शक्ति के प्रवाहित होने से दूसरी दिशाओं में उसकी कमी हो जाती है; और इस प्रकार उस व्यक्ति के जीवन में संतुलन नहीं रह जाता। किसी के अज्ञात मन में विरोधी भावों के

PURVA MIMAANSA

द्वन्द्व से जितनी ही अधिक भावना-ग्रंथियाँ पड़ जाती है उतना ही जटिल और संघर्षमय उसका जीवन हो जाता है। किसी व्यक्ति का व्यवहार और उसकी क्रियाएँ साधारण होने का अर्थ है कि उसके अज्ञात मन में भावना-ग्रंथियाँ नहीं पड़ी है अथवा उसके आभ्यन्तरिक क्षेत्र में संघर्ष नहीं है, और उसका जीवन सुलझा सा है। यदि किसी व्यक्ति का व्यवहार साधारण नहीं है तो इसका अर्थ है कि उसका अज्ञात मन जटिल है; प्रकृत इच्छा और आदर्श में समझौता न होने के कारण वह अद्भुत विचार, आदत, भय और चिन्ता से आक्रान्त है। संघर्ष के कारण मन के निचले स्तर में गुत्थियाँ पड़ जाती है जो ग्रन्थियों का रूप ले लेती है। स्नायुमण्डल (nervous system) हमारे जीवन तथा हमारी आरोग्यता में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। स्नायुमण्डल के ऊपर हमारी सम्पूर्ण शारीरिक क्रियाएँ आधारित है और यह स्नायुमण्डल जरा सी भी मानसिक विकृति से प्रभावित हो जाता है। अतः हमारे बहुत से रोगों के वास्तविक कारण अज्ञात मानसिक भावना-ग्रन्थियाँ होती है।

मैकडुगल के अनुसार मानव में कई एक जन्मजात वृत्तियाँ-प्रवृत्तियाँ (instinctive tendencies) है। इनका परस्पर संघर्ष ही मानसिक रोग का मूल है। वृत्ति-प्रवृत्ति की तुष्टि न होने पर ही भावना-ग्रंथियाँ बनती है और मानसिक अवस्था विकृत हो जाती है।

हठ-योग साधना में इन ग्रंथियों को समाधि अवस्था तक पहुँचने में बाधा के रूप में देखा जाता है। इन ग्रंथियों के कारण ही साधक का अपने स्वतन्त्र नाड़ी तंत्र (Autonomic Nervous System) पर नियंत्रण नहीं रह पाता जिस कारण से साधक अधोगामी हो कर पशु भाव में बना रहता है अर्थात अपनी मूल प्रवृतियों से बंधा रहता है। शरीर विज्ञान की दृष्टि से हठ योग का लक्ष्य आसन, प्राणायाम तथा मुद्रा-बंध द्वारा कुण्डलिनी जाग्रत कर अपने इस स्वतंत्र नाड़ी तंत्र पर नियंत्रण स्थापित करना है।इन ग्रंथियों के कारण ही मस्तिष्क के उच्च केन्द्रों का निचले केन्द्रों पर नियंत्रण छूट जाता है। अतः ग्रंथियों का बनना बाधा के रूप में देखा जाता है।

ग्रंथियों के बनने का दार्शनिक सिद्धान्त हम रस और बल के द्वारा समझ सकते है। बल, शक्ति और क्रिया तीनों का एक ही अर्थ है। बल स्वयं स्वभाव से सीमित होता हैं। वह रस में भी सीमाभाव दिखा देता है। रस बल संयोग का नाम ही जगत है। जब रस पर बलों के ढेर मिलते है तब वह रस बलों सहित एक प्रकार की ग्रन्थि सी हो जाती है। इसी को हृद् ग्रन्थि कहते हैं। रस में बल की स्थिरता से ग्रन्थि हो जाती है। स्थिरता पाये हुए बहुत

PURVA MIMAANSA

से बलों का परस्पर एक दूसरे में भीतर प्रविष्ट हो जाना ही ग्रन्थि कहा जाता है। जिसको व्यावहारिक भाषा में उलझन कहा जाता है। बल से पञ्च महाभूतों के अणुभूत अवयवों में ग्रन्थि पड़ने से एक शरीर रूप अवयवी का निर्माण होता है।बलों के घनभाव में आ जाने पर रस में अल्पता आ जाती है अर्थात बल की खण्ड भाव की घनता से रस का सीमाकरण अल्प भाव में होता है। उस अल्प प्रदेश में फैलने वाले रस में संकोच वृत्ति से अन्तर्मुख होने वाले बल यदि नष्ट नहीं होते तो रस में प्रविष्ट होने वाले उन बलों के परस्पर आघात से घनता उत्पन्न हो जाती है। बलों की इस सघनता से आत्मा के प्रसादभाव का आवरण हो जाता है, फलस्वरूप विमनस्कता - उदासी या खिन्नता आ जाती है।

रस को आत्मा कहते है। हृद् ग्रन्थि के कारण आत्मा का बन्धन है और इस ग्रन्थि के छुटकारे या खुलने का नाम ही मोक्ष है। मोक्ष ही सबसे बड़ा पुरुषार्थ कहलाता है।

शरीर विज्ञान की दृष्टि से ये ग्रंथियाँ मस्तिष्क को तीन हिसो में बाँट देती है। (The threeconstrictions in the neurenteric canal which divided the brain into three parts; the hind brain, the mid brain, and the fore brain). जब मनुष्य का मस्तिष्क hind brain के स्तर पर काम करता है तब तक वह पशु भाव में होता है अर्थात वासना या भावना ग्रंथियों में जकड़ा रहता है। इस अवस्था में उसका मन, इन्द्रियों का अनुगामी होता है और बुद्धि का उस पर नियंत्रण नहीं होता। हठयोग में नादानुसंधान प्रकरण में योग की चार अवस्थाओं का वर्णन आता है। पहली आरंभावस्था में ब्रहम ग्रन्थि का भेदन होना इसी पशु भाव से मुक्त होना है।

ग्रन्थियों का भेदन प्राणायाम के अभ्यास से होता है। अधोगामी अपान जब उर्ध्वगामी होकर अग्नि मण्डल में पहुँच जाता है अर्थात् नाभि के अधोभाग में वर्तमान त्रिकोण जठराग्नि के मंडल में प्रविष्ट हो जाता है उस समय अपान वायु से ताड़ित की हुई जो जठराग्नि की शिखा है वह दीर्घ हो जाती है अर्थात् बढ़ जाती है और फिर अग्नि और अपान ये दोनों अग्नि की दीर्घ शिखा से उष्ण रूप हुए ऊर्ध्वगति प्राण में पहुंच जाते है। उस प्राणवायु के समागमन से देह में उत्पन्न हुई जठराग्नि अत्यंत प्रज्वलित हो जाती है अर्थात् अपान की ऊर्ध्वगति से दी हुई अग्नि अत्यन्त प्रदीप्त हो जाती है। फिर उस अग्नि के अत्यंत दीपन से ग्रन्थि का भेदन हो जाता है। योग दर्शन में पातंजलि कहते है, जैसे किसान एक खेत से दूसरे खेत में जल ले जाता है तो केवल उसकी रूकावट को ही दूर करता है, उस

PURVA MIMAANSA

जल को चलाने का काम वह नहीं करता, रूकावट दूर होने से जल अपने - आप एक खेत से दूसरे खेत में चला जाता है, उसी प्रकार निमित्तों द्वारा जब रूकावट दूर हो जाती है, तब शरीर, इन्द्रियाँ और चित्त - इन सबमें परिवर्तन के लिए जिन-जिन वस्तुओं की आवश्यकता होती है, उन-उनकी पूर्ति अपने-आप हो जाती है। रूकावट दूर होने पर कमी को पूर्ण कर देना प्रकृति का स्वभाव है।

"निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्" ॥ (प.यो.सू. 4:3)

योग दर्शन में प्राणायाम का फल बतलाते हुए पातञ्जलि कहते है-

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् ॥ (प.यो.सू. 2:52)

अर्थात् विवेक ज्ञानरूपी प्रकाश तम तथा रजोगुण के कारण अविद्यादि क्लेशों के मलों से ढका हुआ है। प्राणायाम के अभ्यास से जब यह आवरण क्षीण हो जाता है, तब प्रकाश प्रकट होने लगता है।जैसे अग्नि से धौंके हुए स्वर्ण आदि धातुओं के मल नष्ट हो जाते है, इसी प्रकार प्राणायाम के करने से इन्द्रियों के मल नष्ट हो जाते है।

ब्रह्म ग्रन्थि के भेदन से शारीरिक और मानसिक परिवर्तन का वर्णन हठयोग प्रदीपिका में इस प्रकार से आया है -

दिव्यदेहश्च तेजस्वी दिव्यगन्धस्त्वरोगवान् ।
संपूर्णहृदयः शून्य आरंभो योगवान्भवेत्॥ (ह.यो.प्र.4:71)

दूसरी घटावस्था में प्राणवायु अपने साथ अपान और नाद बिंदु इनको एक करके कण्ठस्थान में जो मध्यचक्र है उसमें पहुंच जाता है जिससे वहा स्थित विष्णु ग्रन्थि का भेदन हो जाता है। योगी उस अवस्था में दृढ़ (स्थित) आसन और ज्ञानी अर्थात् पूर्व की अपेक्षा से कुशल बुद्धि और रूप लावण्य की अधिकता से देवतुल्य हो जाता है।

द्वितीयायां घटीकृत्य वायुर्भवति मध्यगः ।
दृढासनो भवेद्योगी ज्ञानी देवसमस्तदा॥ (ह.यो.प्र.4:72)

तीसरी अवस्था में भ्रुकुटि के मध्य स्थित रूद्र ग्रन्थि का जब भेदन होता है तब वह योगी वात पित्त कफ रूप दोषों के दुःख, वृद्धा अवस्था और आध्यात्मिक दुःख, ज्वर आदि व्याधि, क्षुधाः (भोजन की इच्छा),और निद्रा - इनसे विवर्जित उस समय होता है। अर्थात् पशु भाव से दैवीय भाव में पहुँच जाता है।

PURVA MIMAANSA

चित्तानन्दं तदा जित्वा सहजानन्दसंभवः ।

दोषदुःखजराव्याधिक्षुधानिद्राविवर्जितः॥ (ह.यो.प्र. 4:75)

इसके बाद जब प्राण ब्रह्मरंध्र में पहुँच जाता है तब उस निष्पत्ति अवस्था में चित्त एकीभूत हो जाता है अर्थात् विषय और विषयी इनका अभेद हो जाता है और चित्त एकाग्र हो जाता है। चित्त की एकाग्रता को ही राजयोग कहते है।और राज योग की सिद्धि कराना ही हठयोग का लक्ष्य है।

केवलं राजयोगाय हठविद्योपदिश्यते॥ (ह.यो.प्र.1:2)

निष्कर्ष :-

उपरोक्त वर्णन से यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रन्थियों का भेदन व्यक्तित्व के विकास तथा आध्यात्मिक उन्नत्ति के लिए आवश्यक है। दम्भ करना, घमण्ड करना और अभिमान करना, क्रोध करना तथा कठोरता रखना और अविवेक का होना ये सभी आसुरी सम्पदा को प्राप्त हुए मनुष्य के लक्षण है।

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।

अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ॥ (गीता 16:4)

इन भावो से नाड़ी तंत्र सिकुड़ कर ग्रंथियों का रूप ले लेता है। ये ग्रन्थिया अद्वैत सिद्धि में बाधक होती है और चित्त की एकाग्रता भी सिद्ध नहीं होने देती। हठयोग द्वारा मनुष्य इन ग्रन्थियों का भेदन कर दैवीय सम्पदा प्राप्त कर मोक्ष का भागी बनता है अर्थात् दुःखों से मुक्ति प्राप्त करता है।

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ (गीता 16:1)

भयका सर्वथा अभाव, अन्तःकरणकी अत्यन्त शुद्धि, ज्ञानके लिये योगमें दृढ़ स्थिति और सात्त्विक दान, इन्द्रियोंका दमन, यज्ञ, स्वाध्याय, कर्तव्य-पालनके लिये कष्ट सहना और शरीर-मन-वाणीकी सरलता।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।

भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ (गीता 16:3)

तेज (प्रभाव), क्षमा, धैर्य, शरीरकी शुद्धि, वैर-भावका न होना और मानको न चाहना; ये सभी दैवी सम्पदाको प्राप्त हुए मनुष्यके लक्षण हैं।

PURVA MIMAANSA

राग आदि से दूषित चित्त अनेक रोगों का कारण बन जाता है। इसीलिए व्याधि-चिकित्सा में सर्वप्रथम व्याधि का निर्माण ही न हो इसीलिए चित्त को शुद्ध रखना सर्वाधिक आवश्यक है। चित्त काम, क्रोध, भय, शोक तथा मत्सर आदि विकारों से सर्वथा मुक्त रहे तो व्याधि का प्रादुर्भाव ही नहीं होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

Chandra, Mihir. (2002). *Hathyogapradipika.* Mumbai: Khemraj Publication.

Aggarwal, Padma. (1955). *Manovishleshnaur Mansikkriyane.* Banaras: Manovigyan Publication.

Aggarwal, Padma. (1954). *Manovigyanaur Shiksha.* Banaras: Manovigyan Publication.

Atreya, S.P. (1965). *Yog Manovigyan.* Varanasi: The International Standard Publication.

Prasada, Rama. (2010). *Patanjali's Yoga Sutras.* New Delhi: Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd.

PURVA MIMAANSA